आतमखोज



(शाश्वत जीवन-मूल्यों एवं आत्मिक उन्नति हेतु मासिक-पत्रिका)

ATMA-KHOJ–Self-Introspection

(Monthly Magazine for universal values & self-development)

वर्ष–4, अंक–6 जून 1985 शुल्क–1 रुपया



भक्त कंवरराम

भक्ति और संगीत के अवतार

हंजू हारिनि, गोढ़ा गाढ़िनि, तो लाई अखियूं रतु हाणियूं ।
मुखिड़ियूं जे दिलयुनि जूं, तो बिन कंवर कूमाणियूं ।।

भावार्थ—हे कंवरराम, तेरे लिए ये नेत्र बारम्बार रोते हैं। तेरे बिना ये फूल और कलियों के हृदय भी मुरझा गये हैं।

(जीवनी इसी अंक में अन्दर पढ़िये।)

★ आत्म खोज ★
(मासिक–पत्रिका)

मानद्–सम्पादक व प्रकाशक :
चोइथराम पी॰ साधवाणी
एम.ए., एल.टी.

विशेष परामर्श समिति :
सर्व श्री कीमतराय, दीपचन्द्र बेलाणी, मूलचंद दासवाणी एवं तीर्थदास रंगवाणी

शुल्क :
भारत में वार्षिक : 8 रुपये
आजीवन : 125 रुपये
विदेश में वार्षिक : 3 डालर
आजीवन : 40 डालर

कार्यालय :
आत्मखोज,
शान्ति निकेतन स्कूल
लालकोठी, जयपुर ३०२०१५
टेलीफोन : 68769

इस अंक में—

स्वामी लीलाशाह विश्व सेवा मंडल, अजमेर के सौजन्य से श्री सी. पी. साधवाणी द्वारा सम्पादित व प्रकाशित एवं बाहुबली प्रिंटर्स, लाल कोठी, जयपुर में मुद्रित।

भगवान की प्रसन्नता किन पर ?

(25 अप्रेल 1961 को श्री कृष्ण गऊशाला आगरे में किया गया प्रवचन)

स्वामी जी से किसी जिज्ञासु ने प्रश्न किया कि "स्वामी जी, भगवान कौन से पुरुषों पर प्रसन्न होते हैं ?" स्वामीजी ने उत्तर दिया कि "भक्त, दाता, दीन और शूरवीर" इन चार प्रकार के पुरुषों पर भगवान प्रसन्न होते हैं।

(1) **भक्त**—ऐसा हो, जो बालक अवस्था से लेकर जवानी और बुढ़ापे तक अपना समस्त जीवन परमेश्वर की भक्ति में व्यतीत करे।

(2) **दाता**—ऐसा होना चाहिये, जिसके निर्धन होते हुए भी उसकी धर्म दान में प्रीति हो।

(3) **दीन**—ऐसा हो, जो बड़ा धनी और कुलीन होते हुए भी नम्रता धारण करे और अपने को सब से कम समझे।

(4) **शूरवीर**—ऐसा हो, जो धर्म और देश सेवा के लिए अपना सर बलिदान करे और इन्द्रिय-जीत हो।

उपर्युक्त चारों प्रकार के मनुष्यों पर भगवान प्रसन्न होता है।

शान्ति कब मिलेगी ?

(26 अप्रेल 1961 को श्री कृष्ण गऊशाला आगरे में किया गया प्रवचन)

एक राजकुमार बन में गया तो वहां किसी महात्मा को उसने अत्यन्त शान्त देखा। तब उससे पूछा, "स्वामीजी, मैं ऐसी शान्ति कैसे प्राप्त करूं ?"

सन्त ने कहा—"तुम तो राजा के पुत्र हो, किन्तु मेरा सम्बन्ध है राजाओं के राजा से। यदि उसका दर्शन चाहो तो पहले बताओ कि स्वयं कौन हो ? फिर मैं महाराजा को जाकर कहूंगा कि तुम्हें दर्शन दें।"

राजकुमार ने अपना विजिटिंग कार्ड नाम और पते सहित निकाल कर उनको दिया।

महात्मा ने कहा—"यह कार्ड तो कागज का टुकड़ा है। तुम बताओ कि वास्तव में तुम कौन हो ?"

मन्त्री से मन्त्रणा करके राजकुमार ने पहले कहा कि "मैं मन हूं।" फिर कहा कि मैं बुद्धि हूं—मैं प्राण हूं।"

सन्त ने कहा—"मन और बुद्धि मेरे हैं। इसका अर्थ है कि तुम कोई अन्य वस्तु हो।"

राजकुमार यह सुन करके विचार में पड़ गया। धीरे-धीरे उसे ज्ञात होने लगा कि "मैं आत्मा हूं।" फिर तो अधिक प्रश्न करने की उसे आवश्यकता ही न रही और आत्मा में परमात्मा का दर्शन करके महा शान्ति प्राप्त कर ली।

मन—मन एक शक्ति है। मन के अतिरिक्त मनुष्य कैसा ? मन को किसी काम में डाला जाएगा, तभी वह काम सफल होगा। भावना के सिवाय कार्य अधूरा रहता है। मन बुद्धि के साथ जुड़ा हो। बुद्धि भी भले बुरे की परीक्षा करने के लिए आत्मा से ज्योति प्राप्त करती है।

शरीर रथ, मन घोड़ा, बुद्धि लगाम और आत्मा सारथी है। पापी और पुण्य आत्मा में केवल यह भेद है, जो पापी का मन इन्द्रियों के स्वादों और बाह्य विषयों में दौड़ कर जाता है, परन्तु ज्ञानी अपने मन रूप घोड़े को बुद्धि रूप लगाम से पकड़ कर चलता है और उसकी बुद्धि आत्मा से प्रकाश प्राप्त करती है। ऋषि मुनि मन पर संयम रखकर, अपने में लीन होकर अपने को आत्मा का स्वरूप करके देखते हैं।

—प्रेषक—दीपचन्द्र बेलाणी एम०, ए०

❀ वार्तालाप ❀

(स्वामी बोधराजजी के विचार)

(1) वार्तालाप की माला में प्रत्येक वचन मोती की भांति डालो कि जो तुम्हारा वार्तालाप सुने, वाणी पर मोहित हो जाय ।

(2) जबान 32 दांतों के भीतर सुरक्षित रखी गई हैं, इसलिए कि जो वाक्य निकालो, 32 बार सोचकर बाद में निकालो नहीं तो कोमल जबान को ऐसे कठोर गढ़ में बन्द करने का कोई कारण था ही नहीं ।

(3) बहुत बोलना मूर्खता का चिन्ह है और थोड़ा बोलना बुद्धिमता का चिन्ह है ।

(4) छिले हुए कलम की जबान बाहर निकली हुई देखकर बुद्धिमानों ने उसे चीरना उचित समझा । जिसकी जबान बकबक करके बार-बार बाहर निकलती है, उसका कटना उचित है ।

(5) काफिले के घंटे की आवाज सुनकर डाकू लूटने के लिये आकर ऊपर पड़ते हैं । कौन कहते हैं कि चिल्लाना हानिकारक नहीं है ।

(6) बहुत मिठास से भी रोग उत्पन्न होते हैं । कोई मधुर बोलता हो तो भी बहुत बोलेगा तो किसी को अच्छा नहीं लगेगा ।

(7) बोलने की कला उस व्यक्ति ने अच्छी प्राप्त की, जो कम बोलता है ।

(8) बुद्धिमान के थोड़े बोलने से बड़े कार्य सिद्ध होते हैं और मूर्ख के बहुत बोलने से उल्टा झगड़े ही बढ़ते हैं ।

(9) कठोर और कड़वे वचन बहुत बोलने पड़ते हैं परन्तु मधुर और सच्चा वचन अत्यन्त कम कहना पड़ता है ।

(10) वार्तालाप के गुलदस्ते में प्रत्येक वचन फूल की तरह रखो ।

(11) बुद्धिमानों ने मधुर वचन की मोती से तुलना की है परन्तु किसी मनुष्य का वचन ऐसा आकर्षक लगता है कि मोती भी उस पर बलिदान कर दिये जायं ।

(12) बुद्धिमान अपनी वाणी का स्वामी होता है किन्तु मूर्ख अपनी वाणी का नौकर होता है।

(13) मूर्ख का दिल उसके मुंह में रहता है परन्तु बुद्धिमान का मुंह उसके दिल में रहता है।

(14) दूसरे को उपदेश देने जैसी सरल बात दुनिया में नहीं है और दूसरे का उपदेश कान देकर सुनने जैसी कठिन बात नहीं है।

(15) जो व्यक्ति सुनता है और सोचता है, वह बुद्धिमान होता है परन्तु जो केवल बोलता है, वह मूर्ख होता है।

(16) ईश्वर ने दो कान दिये हैं और एक जबान, इसीलिये कि जितना सुनो उसका आधा बोलो।

(17) जो बोल रहा है, आखिर तो वह बोलकर शान्त हो जाएगा। अतः अपनी बात करने के लिये उतावलापन छोड़कर दूसरे को बोलने का पूरा अवसर दो।

(18) यदि अपने कानों को भीतर मोड़कर अपने प्रभु की आवाज सुनो तो आकाश के प्रत्येक तारे में मोहक मुरली के आलाप, वृक्ष के प्रत्येक पत्ते में रेडियो का मधुर स्वर और मही के प्रत्येक कण में ज्ञान का वार्तालाप सुनने में आए। हे बुद्धिमान ! यहां तो प्रत्येक चीज तुझ से वार्तालाप कर रही है। कानों को तेज करो और जगत् की प्रत्येक चीज से ज्ञान की वार्ता सुनो।

अनुवादक–दीपचन्द्र बेलाणी एम०, ए०

दूर-दूर और आस-पास के अपने मित्र बन्धुओं को "आत्मखोज" का सदस्य बनाकर सुयश के भागीदार बनें। वार्षिक चन्दा मात्र आठ रुपये सालाना जमाकर घर बैठे पत्रिका प्राप्त करें।

अमर शहीद संत कंवरराम

सिन्ध प्रान्त की पवित्र भूमि ने कई सन्त, महात्माओं एवं ऐसी विभूतियों को जन्म दिया है, जिन्होंने न केवल सिन्धी समाज का नाम रोशन किया है परन्तु सम्पूर्ण समाज पर एक अमिट छाप छोड़ी है।

सन्त कंवरराम जी का नाम सिन्ध प्रान्त के साहित्य में एक विशेष स्थान रखता है। सिन्ध प्रान्त में जिला सक्खर के जरवार गाँव में एक गरीब व्यापारी भाई तारा चन्द रहते थे। उन्हें सन्तान न होती थी। उनकी पत्नी तीरथ बाई को यह चिन्ता दिन रात सताया करती थी। एक दिन उसने अपना यह कष्ट सत खोताराम को बताते हुए बच्चों की चाह जाहिर की। संत साहब ने उन्हें दुआ करते हुए कहा—"आपकी गोद में एक ऐसा मुस्कराता हुआ फूल खिलेगा जिसकी सुगन्ध सम्पूर्ण देश में फैलेगी परन्तु उस बालक को परमेश्वर की सेवा में छोड़ना पड़ेगा।"

कुछ समय के पश्चात् माह अप्रेल सन् 1885 (सम्बन्ध 1942) को श्रीमति तीरथ बाई की गोद भरी। बालक के जन्म लेते ही संत खोताराम को दिये हुए वचन के अनुसार श्री ताराचन्द जी उसे संत सतराम दास जी की दरबार में ले आये संत सतराम दास जी ने बालक को आशीर्वाद देते हुए उनका नाम कंवर रखा।

संत कंवरराम जी की बचपन से ही संगीत में रुचि थी तथा 6 वर्ष की आयु में ही वे चने आदि बेचकर अपने पिताजी के कार्य में हाथ बंटाते थे

तथा इसके उपरान्त वे अपने पिता जी की खेती की भी देखभाल किया करते, परन्तु उनका ध्यान हमेशा परमेश्वर की ओर लीन रहता।

किशोरावस्था में कंवरराम का विवाह मुखी नोतोमल की पुत्री काकी बाई से फागुन सम्वत 1960 में कराया गया।

संत सतराम दास की आर्शीवाद से गुणवान एवं कलावान संत कंवरराम सिन्ध के अलग-अलग प्रान्तों एवं गांवों में संगीत के द्वारा प्रभु की महिमा का सन्देश पहुंचाते रहे। जब वे अपने गुरु द्वारा भेंट में प्राप्त (जामो) छेर व पकडी पहन कर भक्ति-भाव करते तो हजारों की तादाद में जनता उमड़ पड़ती। उनके पास जात-पात का कोई भेद-भाव नहीं था। भक्ति के समय अनेक अपाहिज लोग उनके साथ हुआ करते थे। प्रभु की भक्ति में जितना भी रुपया पैसा उनकी झोली में आता उसे वे गरीबों में बांट देते थे। संत कंवरराम जी ने जनसेवा के अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये। अनाथों की मदद करना, कन्याओं के विवाह में सहायता करना, पंचायतों की समस्याओं का समाधान करना तथा दीन-दुखियों के दर्द निवारण में वे हमेशा लीन रहते। ये सारे कार्य करते रहने पर भी उनका ध्यान हमेशा परम परमेश्वर की भक्ति में लीन रहता। कहते हैं कि एक बार एक महिला अपने मरे हुए बालक को कपड़े में ढककर संत कंवरराम साहिबके पास लोरी देने के लिए लाई तो वह मरा हुआ बालक भी जी उठा।

संत कंवरराम के संगींत में जहां एक ओर प्रभु की आराधना थी वहीं दूसरी ओंर जादू भी। एक बार तूफान के अचानक आ जाने से जब नाव नदी में डूब रही थी जिसमें कुछ संत एवं एक व्यापारी बैठे थे। ऐसी संकट की घड़ी में संत कंवरराम जी ने अपने मधुर आवाज में प्रभु को पुकारा तो तूफान भी कुछ समय के लिए शान्त हो गया और नाव किनारे पर आ गई।

संत कवरराम साहिब परोपकारी एवं क्षमा के पुतले थे तथा उन्होंने हमेशा दरिद्रो से प्रेम किया व उन्हें अपने नजदीक रखा।

एक बार एक शादी के अवसर पर कुछ अफसरों ने संत की लीला देखने हेतु उन्हें 'सारंग" गाने के लिए जोर दिया। संतजी ने फरमाया कि

सारंग गाने पर वर्षा आती है और वर्षा के फलस्वरूप शादी के इस अवसर पर काफी परेशानी हो जायेगी परन्तु वे न माने। संतजी ने इतने में ज्योंही सारंग गाना शुरू किया तो कुछ ही क्षणों में बादल उमड़ आए और इतनी वर्षा हुई कि खाने तक का सामान बेकार हो गया। अफसरों ने बड़ी शर्मिन्दगी से संत के पाव पकड़ लिए।

एक बार सिन्ध के 'कुम्भलीमा' गांव में बरसात पड़ रही थी। कुछ मुसलमान भाइयों ने संतजी की शक्ति देखने हेतु उन्हें निवेदन किया कि आप वर्षा बन्द कर दिखाइये तो आपको मानें। संत ने फरमाया कि मुझमें कोई ऐसी शक्ति नही फिर भी आपकी इच्छा पूर्ति हेतु मैं ईश्वर से आराधना करता हूं। ऐसा कहते उन्होंने "सोरठ" गीत गाना प्रारम्भ किया बादल हट गए और वर्षा बन्द हो गई। तत्पश्चात् मुसलमान भाई उनके पांवों पर गिर गये और उन्हें अपना पीर (गुरु) मानना आरम्भ कर दिया।

संत कंवरराम साहिब के इस प्रकार के कई ऐसे प्रसंग हैं जिन्हें यदि लिखना आरम्भ किया जाए तो एक बहुत बड़े ग्रन्थ का निर्माण हो जाएगा।

महान् आत्माओं की भांति, संत कंवरराम साहिब को भी परलोक सिधारने के समय का पूर्वतः ही अनुमान हो गया था। हिन्दू-मुस्लिम दंगों के उपरान्त मुसलमानों ने संतजी को मारने की ठानी तथा हिन्दुओं ने संतजी को अपनीं सुरक्षा के प्रति सजग रहने का आग्रह किया तो सन्तजी ने उसे अस्वीकार करते हुए कहा कि "यह देह तो प्रभु की अमानत है। देने वाले भी वे हैं तो लेने वाले भी वे ही हैं।" मृत्यु के पूर्व उन्होंने अपने प्रति देनदारी व लेनदारी का सम्पूर्ण हिसाब तय कर लिया तथा वे एक बार अपने गुरु भाई संतराम दास की समाधि पर आए। तत्पश्चात उन्होंने चाबियां श्री रोहिड़ाराम को सम्भलवा दी। माझंद की दरबार में गाते:गाते वे इतनी मस्ती में आ गए कि उन्होंने "मारु" गीत गाना शुरू कर दिया तथा उनकी आंखों में आंसू आ गए। दादू शहर में जब वे श्री हरदास मल, कलक्टर के घर पर खाना खा रहे थे तो अचानक उनके मुंह से कौर गिर गया। उन्होंने

यह कहते हुए खाने को आगे सरका दिया कि "इस दुनिया से अपना दाना-पानी खत्म हो गया है।"

यह भविष्यवाणी तब सामने आई जब "रूक" स्टेशन पर भगत साहिब प्लेटफार्म पर अपने साथियों के साथ खड़े थे तो दो अजनबी उनके पास आए और उनसे अपने कार्य में सफलता हेतु आर्शीवाद मांगा। संत जी ने उन्हें आर्शीवाद देते हुए बतौर प्रसाद के अंगूर भी दिये। गाड़ी प्लेटफार्म से रवाना हुई, संतजी खिड़की के पास अपना सिर रखकर आंख मूंदकर, विचारमग्न थे कि अचानक दो गोलियां चली। एक गोली सीधे संत कंवरराम के मस्तिष्क पर लगी वे बैंच से नीचे गिर पड़े तथा उनके मुख से अन्तिम आवाज निकली—"हे राम" इस तरह वे 1 नवम्बर 1939 को परलोक सिधार गये।

यह घटना बिजली की भांति फैलते ही समस्त सिन्ध प्रान्त में हड़ताल हो गई। घर-घर में मातम छा-छ गया। हिन्दू तथा मुसलमान फूट-फूट कर रोये। यद्यपि उनका नश्वर शरीर चिता में जल कर राख हो गया, परन्तु वे सदा-सदा के लिए अमर हो गये, शहीद हो गये। आज भी उनकी मधुर आवाज उनकी अमरता की द्योतक है।

15 अप्रैल 1985 को सम्पूर्ण विश्व में सिन्धी समुदाय द्वारा संत कंवरराम की जन्म शताब्दी मनाई गई।

अनमोल वचन

१. तीन चीजें जीवन में एक बार मिलती हैं।
   (१) मां (२) बाप (३) जवानी
२. तीन चीजें हमेशा याद रखनी चाहिए।
   (१) कर्ज (२) फर्ज (३) मर्ज
३. तीन चीजें बस में रखो।
   (१) काम (२) लोभ (३) मद
४. तीन चीजें गई हुई जीवन में वापिस नहीं आती हैं।
   (१) तीर कमान से (२) बात जुबान से (२) प्राण शरीर से।
५. तीन चीजें जीवन में किसी का इतंजार नहीं करती हैं।
   (१) समय (२) मौत (३) ग्राहक।
६. तीन का जीवन में सम्मान करना चाहिए।
   (१) माता (२) पिता (३) गुरु।

स्वास्थ्य विचार

(घरेलू इलाज)

सिन्धी आत्मदर्शन से सिन्धी लेखक डा० जेठानन्द राष्ट्रवादी हैदरावाद दक्षरण
अनुवादक:—दासवाणी

(१) **दिल की धड़कन**:—(१) तुखम रिहान १२ ग्राम, अर्क गुलाब 125 मिलीमीटर में एक घन्टा तक रखा जाय, बाद में इसी में शुद्ध शहद 25 ग्राम मिलाकर प्रतिदिन दो बार लिया जाय।

(२) फूल नीलोफर, चन्दन चूरा, धनिया, प्रत्येक 6–6 ग्राम 180 मिली लीटर जल में रात्रि को भिगो दें, प्रातः व सायंकाल आधा–आधा छानकर शक्कर मिलाकर पी लिया जाय।

(3) सौंफ, इलायची, धनिया व तपाशीर (वंशलोचन) सभी का वजन बराबर लेकर, कूटपीस कर रखें, प्रतिदिन 2-3 बार 3-3 मासा गर्म जल के साथ लिया जाय। बदहजमी व गैस रोगों में लाभकारी है।

(4) धनिया 6 ग्राम, किशमिश 10 ग्राम रात्रि को 60 मिली लीटर जल में भिगो दिया जाय, प्रातःकाल पीसकर पी लिया जाय।

(२) **बेहोशी**:—यह रोग क्रोध अथवा सदमें द्वारा होता है, कभी-कभी स्त्री रोगियों को मासिक अनियमिता आदि व कमजोरी से बेहोशी आकर हाथ–पांव ठण्डे हो जाना, नाड़ी का कमजोर चलना एवं मुख पीला सा हो जाता है।

(1) जहरमोहरा, यशब एवं वंशलोचन बराबर वजन मिलाकर पीसकर 1–1 माशा जल से लिया जाय।

(2) नरकचूर 12 ग्राम बारीक पीसकर एक ग्राम जल के साथ लिया जाय।

(3) हींग, कपूर, दोनों पीसकर रखें। मात्रा 125 मिलीग्राम जल या गुलाब अर्क के साथ लिया जाय।

(4) यदि सदमें के कारण बेहोशी हो तो अर्क गुलाब अथवा जल के छींटे चहरे पर दें।

स्वास्थ्य रक्षा के लिए दिल की रक्षा कीजिए—

○ हमारा शरीर विभिन्न अंगों का बना है और सभी का स्वस्थ होना जरूरी है। दिल इन अंगों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

○ दिल आपका चौबीसों घण्टों का नौकर है, पर वह कोमल होता है। उस पर बहुत बोझा मत डालो, उससे उतना ही काम लो जितने में वह बना रहे।

○ मानसिक चिन्ता, निराशा, उदासीनता दिल के लिए विष का काम करती है। बराबर याद रखें—जिस दिन दिल की धड़कन बन्द हो जाएगी—उस दिन जीवन की गाड़ी ठप्प हो जायेगी।

○ दिल को सदा प्रफुल्लित रखो तो आपका शरीर स्वस्थ रहेगा। आप दिल की देखभाल करते रहेंगे तो दिल आपकी सदा सेवा करता रहेगा। दिल के बिना शरीर की कल्पना नहीं की जा सकती।

○ आजकल हृदय-रोग तपेदिक के समान महामारी का रूप धारण करता जा रहा है। तपेदिक गरीब मार बीमारी है और हृदय रोग अमीर मार।

● कैलोरी जनक पदार्थ जिसमें कार्बोहाईड्रेट. प्रोटीन और फैट (चर्बी या वसा) की अधिकता रहती है शक्तिवर्द्धक कहे जाते हैं' इसलिए खुशहाल लोगों द्वारा किया जाने वाला मांस-मछली, अण्डा घी. मक्खन, पनीर, अत्यधिक मिठाइयां जैसी भारी वस्तुओं का बेशुमार प्रयोग हृदय रोगों को पैदा करता है।

○ सारांश में हृदय रोगों का सबसे अधिक सम्बन्ध आहार से है। आयुर्वेद मनीषियों ने भी खाद्यान्नों के विभिन्न अंगों का बड़ी बारीकी से अध्ययन किया है। इनके गुण, दोष बात, पित्त एवं कफ से प्रभावित किए गए हैं। इनके अनुसार भोजन व्यवस्था हृदय रोगों से बचाती है।

● माँसाहार और अण्डा इत्यादि का अधिक प्रयोग करने वालों के रक्त में 'कालौस्टौरय' नामक द्रव्य बढ़ जाता है, किन्तु शाकाहारी के रक्त में इसकी वृद्धि नहीं होती। इसलिए शाकाहारी लोगों में हृदय रोग कम होते हैं।

◦ हृदय रोगों से रक्षा के लिए मदिरा और धूम्रपान (बीड़ी सिगरेट) तथा अन्य नशीली चीजों से परहेज करना जरुरी है। निकोटिन किसी भी रूप मे हृदय का पोषक नहीं है। इससे रक्तचाप में वृद्धि होती है और धड़कन बढ़ती है।

◦ धूम्रपान से नसों के भीतर अत्यधिक उत्तेजना पैदा होती है। कहा जाता है कि प्रतिदिन 20 सिगरेट पीना घातक हृदयाघात होने के खतरे को पाँच गुना अधिक बढ़ा देता है।

◦ जिन लोगों को कलह, द्वेष, वैमनस्य, आतुरता, अनेक प्रकार की धोखाधड़ी के कारण रात-दिन नींद नहीं आती वे हृदय के रोगों के शिकार होते हैं।

◦ दिल ही वह पम्प है जिसमें गन्दा रक्त आकर फेफड़ों में सफाई के लिए भेजा जाता है। फिर दिल ही शुद्ध रक्त शरीर के तमाम अंगों को भेजता है। रक्त संचार में बाधा पड़ने पर दिल का दौरा पड़ जाता है।

◦ दिल का दौरा हल्का, भारी या अत्यन्त तीव्र हो सकता है। बहुधा हल्का दौरा पड़ने पर रोगी बच जाते हैं लेकिन इन्हें बार-बार दौरा पड़ने का भय बना रहता है। तीव्र दौरा पड़ने पर प्राण बचाना कठिन हो सकता है।

◦ समय-समय पर हृदय और रक्तचाप की जाँच कराना बहुत जरूरी है। घबराहट, धड़कन, सीने में वायु और दर्द, पसीना, साँस फूलना, बेहोशी इत्यादि के लक्षण उत्पन्न होने पर तुरन्त वैद्य जी की सलाह लीजिए नहीं तो खतरा हो सकता है।

◦ दिल का दौरा होने पर रोगी के लिए पूर्ण विश्राम अनिवार्य होता है। जो लोग दौरे के बावजूद अपने स्थान से चलते-फिरते या हिलते-डुलते हैं उनका जीवन किसी भी समय संकट में पड़ सकता है।

◦ दिल की बीमारी का स्वयं इलाज न करें। ओझा या सयानों का परामर्श या वायु शमन सम्बन्धी दवाओं का सेवन अथवा अन्य मनमाने तरीके अपनाना खतरे से खाली नहीं होते। सन्देह होने पर अनुभवी वैद्य की तुरन्त सलाह लीजिए।

◦ बराबर याद रखिए—आपके हृदय पर आपका स्वास्थ्य निर्भर है।

❀ प्रार्थना का महत्व ❀

—देवीचन्द भण्डारी

प्रार्थना भक्ति का एक अंग है। सच्ची प्रार्थना तब है जब परमात्मा को सर्वस्व अर्पण कर दिया जाता है। प्रार्थना आत्मा की खुराक है। सच्ची प्रार्थना की पवित्र क्रिया नर को नारायण बनाने में सहायक होती है। गांधीजी के विचार से मानव के लिए भोजन की अपेक्षा प्रार्थना अधिक उपयोगी है खाना भले छूट जाय, पर प्रार्थना नहीं छूटनी चाहिये। विभिन्न धर्मों के बीच कई तरह के सिद्धान्त भेद है फिर भी प्रभु प्रार्थना के सम्बन्ध में प्रायः सभी धर्मों का एक स्वर रहा है। रामकृष्ण परमहंस ने तो यहाँ तक कह दिया कि—'मां और उसकी प्रार्थना' से उत्तम आवश्यक और उपयोगी कोई वस्तु नहीं है।

प्रार्थना दो प्रकार की होती है—(१) **बाहरी यानि ऊपरी** जो केवल मुंह से की जाती हैं पर मन कभी अन्दर कभी बाहर यानि कभी एकाग्रता में मन डुबकी लगाता है, कभी पृथक होता हुआ नजर आने लगता, फिर प्रार्थना 'प्रेम' का प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहती, साहस और सामर्थ्य प्रदान करती है फिर चाहे वे क्षणिक व अस्थाई ही क्यों न हो ? (२) **आन्तरिक प्रार्थना** : आरम्भ में प्राथना समूह में अथवा एकान्त में एक स्वर मिला के की जाती है। जिससे प्रार्थना में रुचि जागृत होती है बाद में व्यक्ति अन्तःकरण से जब प्रार्थना करता है तो उसको सर्व प्रकार की सिद्धी होने लगती है। नियमित और सतत् प्रार्थना के जरिये साधक मन व इन्द्रियों पर भी शनैः शनैः काबू पा लेता है।

आप अन्तर्मन से प्रार्थना करेंगे तभी उसमें माधुर्य आ सकता है। बिना इसके केवल पन्द्रह मिनट प्रार्थना बोल गये पर न तो उससे

आपका मन ही उसमें भीग सका और न उसमें तन्मयता आ पाई तो उससे आंतरिक आनन्द कैसे प्राप्त हो सकता है ? शब्द तो स्तुति का बाह्य शरीर है और भाव उसकी आत्मा है। आत्म शून्य देह क्या मूल्य रखती है। उसमें भाव नहीं तो वह अर्थ शून्य है। उसमें चमक नहीं आयेगी। प्रार्थना गाते हुए इतनी तन्मयता आनी चाहिए कि उसमें मन प्राण एक रूप बन जायें।

एक फकीर के पैर में कील चुभ गई। हकीम ने खींचने का प्रयत्न किया, अभी छुआ भी नहीं था कि फकीर चीख उठा उसने कील निकलवाने से इन्कार कर दिया। वह बोला इस दर्द को सह नहीं सकता। अन्त में उसने कहा—'अच्छा तो मैं चार बजे नमाज पढ़ूंगा जब मैं उसमें तन्मय हो जाऊं तब आप कील निकाल लीजियेगा। मुझे पता भी नहीं लगेगा। आखिर वैसा ही किया गया वह ज्यों ही नमाज में तन्मय बना पीछे से हकीम ने कील खींच ली। नमाज का कार्य समाप्त होने पर उसने पूछा क्या कील निकल गई ? जो कील को छूने मात्र से चीख उठता था उसे पता ही नहीं कि कील कब निकाल ली गई ? यह है तन्मयता का एक चित्र। जिसमें साधक सब कुछ बाहरी रूप भूल जाता है।

प्रार्थना नित नियमित समय पर अन्तर्बाह्य शुद्धि करके एक निश्चित स्थान पर सहज अवस्था में बैठने या सम्यक् सिद्ध अवस्था में एक बिन्दु को लक्ष्य करके यानि दोनों भौयों के मध्य थोड़े से ऊपर की ओर ध्यान करने या उसी स्थान पर स्थिर होकर गुणगान जय, स्तुति आदि करने से चन्द दिनों में एक आलौकिक बदलाव आता, स्पष्ट दिखलाई देने लगेगा। प्रातः बेला ब्रह्म मुहूर्त और सायंकाल सूर्यास्त का समय ठीक रहता है। यूं देखा जाए तो प्रभु की प्रार्थना का क्या सब समय उसी का दिया हुआ है प्रार्थना करनी मनाही नहीं है। परन्तु एक नियम समय व स्थान मुकर्रर करना अधिक लाभप्रद सिद्ध होता देखा गया है।

हृदय से प्रार्थना करने से सत्कर्म करने को प्रेरणा प्राप्त होती है और सत्कर्म फिर प्रार्थना की ओर जुटने म सहायक सिद्ध होते देखे गये हैं। प्रार्थना करने से अच्छे संस्कारों का उदय होना प्रारम्भ हो जाता है। इससे हृदय कोमल और दयालु बनता जाता है।

प्रार्थना में एक ऐसी विशिष्ठ शक्ति है जो हमें श्रद्धाशील बना देती है। उन महान् आत्माओं के गुण-गानों से जिन्होंने उत्कृष्टतम शुद्धावस्था रूप परमात्म पद को प्राप्त कर ईश्वरत्व धारण कर लिया हैं और जो सांसारिकता से सर्वथा विमुक्त होकर निजानन्द में तल्लीन हो गए है, प्रभावित होकर हमें भी हमारे जीवन के लिए उसी लक्ष्य तक पहुँचने को जो आदर्श कामना करते हैं, उसी अपने आत्मा के प्रति की गई याचना का नाम ही प्रार्थना है। आत्म विकास का मार्ग सिनेमा के दृश्यों की तरह हमारे मस्तिष्क पटल में स्पष्ट तौर पर अंकित हो जाते हैं। यही जीवन का सत्य है और इसी को प्रार्थना हमारे समक्ष प्रकट करती है।

प्रार्थना का क्षेत्र अत्यन्त विशाल होने से साधक का हृदय भी विशाल उदार होने लगता है। प्रार्थना में बड़ी शक्ति है। व्यक्ति जिसकी प्रार्थना करता है वह उस जैसा गुणवान होने लगता है। प्रार्थना के शब्द में ईश्वरीय शक्ति निहित होने से साधक में यह प्राण फूंक देती है। इससे सोई हुई शक्ति अन्तःकरण में जगने लगती है। जीवन निखरने लगता है। धीरे-धीरे समय पाकर जीवन आदर्श बन जाता है। साधक-साधक में चेतना सत्ता की अनुभूति उसका दिग्दर्शन चहुँ ओर होने लगता है। यहां तक कि २४ घण्टों उसका अहसास

होने लगता है क्योंकि मनुष्य जब ध्यान के माध्यम से दत्तचित्त होकर प्रार्थना में लगता है तो शब्दों के परमाणु 'शक्ति की आकृष्टता' उसमें प्रवेश होने लगती है। प्रार्थना दिव्यता की ओर ले जाती है, नीचे पड़े अविवेक अज्ञान के अन्धकार में फंसे व्यक्ति को प्रकाश में लाने का और कोई उपाय नहीं, जीवन में उदात भावना सेवा सुश्रूषा की जागृति का विचार केवल प्रार्थना से ही सम्भव है। इसका सबूत महात्माओं ने ईश्वर भक्ति ने आत्मानुभूति प्राप्तकर्ताओं ने दिया है।

प्रार्थना से अग्रज्ञान (दूरदर्शिता) की उपलब्धि होने लगती है। भले-बुरे का भेद स्वतः ही होने लगता है। जो निज हृदय का प्रकाश कहलाता है तथा अच्छे सस्कारों का उदय होना आरम्भ हो जाता है। इससे हृदय कोमल और दयालु बनता जाता है। अतः मनुष्य निर्भय होकर प्रार्थना करे, उससे किसी प्रकार की हानि होने का प्रश्न ही नहीं उठता है बल्कि अनन्य उपलब्धियां प्राप्त करेगा।

यह ध्यान रहे कि हृदय की मलिनता हटाकर प्रार्थना करने पर ही आनन्द आता है। सच्ची प्रार्थना वह पथ है जिस पर चलकर आत्मा जागृत होती है और आराधना वह आंख है जिससे हम प्रभु को देख सकते हैं।

गायत्री मंत्र

ओम भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥

हे प्राणस्वरूप दुःख हर्ता और व्यापक आनन्द के देने वाले प्रभो! आप सर्वत्र और सकल जगत के उत्पादक हैं। हम आपके उस पूज्यनीय पापनाशक स्वरूप तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धियों को प्रकाशित करता है। हे पिता! आपसे हमारी बुद्धि कदापि विमुख न हो। आप हमारी बुद्धियों में सदैव प्रकाशित रहें और हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों में प्रेरित करें।

❀ सच्चे सुख का रास्ता ❀

याज्ञवल्क्य वेदों, उपनिषदों और ब्रह्म-विद्या के बहुत बड़े ज्ञाता थे। उन्होंने अनेक ऋषियों के समीप विविध प्रकार की शिक्षा प्राप्त की थी। सारे देश में वह श्रेष्ठ वेदज्ञ समझे जाते थे।

गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी, याज्ञवल्क्य सदा अध्ययन-अध्यापन में लगे रहते थे। उनकी दो पत्नियाँ थीं। एक पत्नी का नाम मैत्रेयी था और दूसरी का कात्यायनी। मैत्रेयी बड़ी विदुषी थी। वह अपने पति के साथ बैठकर शास्त्र-चर्चा किया करती थी। कभी-कभी तो वह विद्वानों की सभा में भी उपस्थित होती और आध्यात्मिक विषयों की चर्चा में भाग लेती। कात्यायनी गृह-कार्यों में बड़ी निपुण थी। उन्होंने अपनी दोनों पत्नियों को बुलाकर कहा-- "अब मैं गृहस्थ-आश्रम त्यागकर कहीं एकान्त में चला जाऊँगा और तप करूँगा। अतः मैं अपनी सम्पत्ति तुम दोनों में बांट देना चाहता हूं।"

कात्यायनी ने तो इस पर अपनी स्वीकृति दे दी, परन्तु मैत्रेयी ने कहा— "हे भगवन्! संपूर्ण पृथ्वी का राज्य और अतुल सम्पत्ति प्राप्त होने पर भी कोई व्यक्ति अमर नहीं हो सकता। अधिक से अधिक इस संसार में वह सुख-सुविधा के साथ जीवन-निर्वाह कर सकता है। अतः सम्पत्ति देने के बदले, आप मुझे वह ज्ञान दीजिए, जिसकी सहायता से मैं अमरता के पथ पर पाँव रख सकूँ।"

याज्ञवल्क्य बोले—"मैत्रेयी! मै तुम्हारी विद्वत्ता से बहुत प्रसन्न हूँ। तुममें ज्ञान प्राप्ति की सच्ची लगन है। विद्या और ज्ञान की प्राप्ति के सामने सांसारिक धन-सम्पत्ति का कुछ भी मूल्य नहीं है। मैं तुम्हें अमरत्व पाने का उपाय बतलाता हूँ। ध्यान देकर सुनो।"

"हे देवि! जिस प्रकार पानी से भरे हुए एक बर्तन में नमक का एक टुकड़ा डाल देने पर वह धुल-मिल जाता है, उसी प्रकार एक महान् आत्मा सारे संसार में मिली हुई है। जिस प्रकार घुल जाने पर नमक की डली दिखाई नहीं पड़ती, उसी प्रकार वह महान् आत्मा भी इन आँखों से दिखाई नहीं पड़ती। परन्तु हम पानी को चखकर यह जान लेते हैं कि उसमें नमक

मिला हुआ है, उसी प्रकार ज्ञान द्वारा हम उस महान् आत्मा का अनुभव कर लेते हैं।"

मैत्रेयी ने पूछा—"यदि सारे संसार में सभी प्राणियों में एक ही महान् आत्मा निवास करती है तो हम उसे अलग-अलग क्यों समझते हैं ?"

याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया—"जिस प्रकार नमक से मिले उस पानी को अलग पात्रों में भर दिया जाय तो नमक सब में ही रहेगा। जैसा नमक एक पात्र के जल में है वैसा ही नमक दूसरे पात्र के जल में भी। जो दोनों में घुले हुए नमक को अलग-अलग समझता है, वह भ्रम में है। किन्तु जो व्यक्ति दोनों पात्रों के नमक को एक ही समझता है, वही तत्वज्ञानी है। इसी प्रकार अनेक प्राणियों में एक ही महान आत्मा भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई पड़ती है। जो व्यक्ति अपनी आत्मा के समान ही दूसरों की आत्मा को भी समझता है, वही सच्चा आत्म-ज्ञानी है।"

मैत्रेयी ने फिर कहा—"यदि हम ऐसा समझ लें कि सभी प्राणियों में एक ही महान् आत्मा निवास करती है तो इससे क्या लाभ होगा ?"

याज्ञवल्क्य ने हँसते हुए उत्तर दिया—"देवि ! ऐसा ज्ञान हो जाने पर मनुष्य का जीवन बदल जाता है। ज्ञानी व्यक्ति सारे संसार के कल्याण में लग जाता है। वह किसी को दुःख नहीं देता। वह समझता है कि जिस प्रकार किसी बुरे काम से मुझे दुःख होता है, वैसे ही दुःख दूसरों को भी होगा। वह सबको सुखी बनाने का प्रयत्न करता है। दूसरों को सुखी एवं प्रसन्न बनाने में ही उसकी आत्मा प्रसन्न रहती है। वह समझता है कि दूसरों का सुख अपना ही सुख है।"

मैत्रेयी ने भी सहमत होते हुए कहा—"इसीलिए परोपकार को बड़ा पुण्य-कार्य माना गया है। सबको दूसरों के हित का ध्यान रखना चाहिये।"

याज्ञवल्क्य ने सिर हिलाते हुए कहा—"नहीं देवि ! परोपकार द्वारा हम बहुत बड़ा पुण्य-कार्य नहीं करते। यह तो अपना कर्तव्य-पालन मात्र है। जैसे शरीर का प्रत्येक अंग एक दूसरे का काम करता है, तभी शरीर ठीक ढंग से चल सकता है। यदि आँख कहे कि "मैं कोई चीज नहीं देखूँगी" और हाथ कह दे कि "आँख में पड़े तिनके को मैं नहीं निकालूँगा" तो शरीर का काम कैसे चलेगा ? उसी तरह समाज के भीतर रहकर परोपकार द्वारा हम एक

दूसरे को सहयोग देते हैं, उसी में स्वर्गीय सुख मिल सकता है। यदि संसार के सभी लोग उस महान् आत्मा की सेवा में लग जायें जो तुम में, हम में, सब में स्थित है, तो सारा संसार ही स्वर्ग बन जाये। आत्म-ज्ञानी पुरुष अपने कार्यों द्वारा सबको कल्याण का मार्ग दिखलाते हैं।"

मैत्रेयी ने अपने पति की बातें ध्यान से सुनीं। वह जानना चाहती थी कि कौन सी ऐसी बाधा है जिससे प्रत्येक व्यक्ति संसार के कल्याण में नहीं लग पाता। अतः उसने इस प्रश्न को पुनः याज्ञवल्क्य के सामने रखा।

याज्ञवल्क्य ने बताया—"स्वार्थ ही सबसे बड़ी बाधा है, जिसके कारण मनुष्य लोक-कल्याण में नहीं लग पाता। स्वार्थी मनुष्य दूसरों को कष्ट देकर भी अपने को सुखी बनाना चाहते हैं। फल यह होता है कि सभी उससे घृणा करने लग जाते हैं ऐसे व्यक्ति का न तो समाज में आदर होता है और न उसे कोई स्नेह ही करता है।"

"संसार में जो व्यक्ति अपने ही लिए होता है. वह दूसरों को प्रिय नहीं लगता। पुत्र अपने लिए प्रिय नहीं होता, वह माता पिता के लिए प्रिय होता है। वेद केवल वेदों को प्रिय लगें, इसमें उनका बड़प्पन नहीं है। वे पाठकों को प्रिय लगते हैं, इसीलिए लोग उन्हें पढ़ते हैं और उनका आदर करते हैं, इसी कारण उनका गौरव है।"

"आत्मज्ञानी व्यक्ति दूसरों को सुखी देखकर प्रसन्न होता है और किसी को दुःखी देखकर उसे कष्ट होता है। उसकी आत्मा महान् बन जाती है। वह सब में अपनी ही आत्मा का दर्शन करता है। इसी कारण वह सबके सुख-दुःख में शामिल होता है— तन, मन, धन से लोक-कल्याण में लग जाता है। सारा संसार उस को प्रिय लगता है, अतः सारे संसार का वह भी प्रिय बन जाता है। सभी उसके नाम की माला जपते हैं। लोक कल्याण में लगा हुआ व्यक्ति ही महापुरुष कहलाता है। जो महापुरुष बन जाते हैं, वे ही अमर हो जाते हैं। किन्तु जिनको पहले अवसर नहीं मिलता, उन्हें भी अपनी आयु के अन्तिम भाग को सन्यास आश्रम में प्रवेश करके लोक-सेवा में लगाना चाहिए। वैसे, दूसरों की भलाई का कार्य किसी भी समय, आयु के किसी भी भाग में करते रहना चाहिए। इसी में मानव-जीवन की सफलता है।"

मैत्रेयी को इस प्रकार ज्ञान देकर याज्ञवल्क्य तप करने के लिये वन में चले गये।

—प्रेषक-**श्रीमती सुशीला**

तू कौन ? मैं कौन ?

आतम के अज्ञान ते, सत् भासत संसार ।
गुरुमुख आतम ज्ञान से, जानत जगत असार ॥१॥

जग झूठा सत् आतमा, भाखत वेद पुरान ।
वो सत् आतम आप हो, गुरुमुख निश्चय जान ॥२॥

गुरुदेव हम कौन हैं दीजे मुझको ज्ञान ।
सत् चित आनन्द रूप तुम, गुरुमुख निश्चय जान ॥३॥

ईश कहां वो रहत है, उसका कहां मकान ।
सर्व घटों में रहत है, गुरुमुख निश्चय जान ॥४॥

मुझको दर्शन ईश का, गुरु कराओ आप ।
गुरुमुख हरि वो आप हो, जप सोऽहम् का जाप ॥५॥

देह मन्दिर में रहत है, आतम देव महान् ।
कह गुरुमुख तांको लखो, गुरु से ले निज ज्ञान ॥६॥

गुरुमुख गुरु से ज्ञान ले, जप सोऽहम् का जाप ।
भेद रहित भक्ति करो, जीव ईश मय जान ॥७॥
तूं सब में सब तोहि में, तूं ही सब में आहि ।
गुरुमुख यह निश्चय करो, दूजा कोई नाहि ॥८॥
जीव ब्रह्म का रूप है भाखत वेद पुरान ।
इनमें कुछ संशय नहीं, गुरुमुख निश्चय जान ॥९॥
शरीर तो थिर ना रहे, इक दिन होसी नाश ।
कह गुरुमुख त्रिकाल में, आतम रह अविनाश ॥१०॥
जन्मे मरे न आतमा, जन्मे मरे शरीर ।
गुरुमुख गीता में कहा, ऐसे ही यदुवीर ॥११॥
जैसी जांकी दृष्टि है, तैसी सृष्टि होय ।
दृष्टि सृष्टि यह बाद हैं, गुरुमुख समझे कोय ॥१२॥

—(श्री गुरुमुख दोहावली से)

ठोकर लगे और दर्द हो तभी कुछ सीखा जा सकता है।

संसार में अब तक जितनी भी महान-विभूतियां, महापुरुष, सुधारक विद्वान, जन-नायक, कवि कलाकार आदि हुए हैं। वे ऐसे ही लोग थे जिनके जीवन में पीड़ा थी, दर्द था और थी एक तड़फ। व्यक्ति को ज्ञान बोध होगा कैसे जब तक वह अज्ञान की चट्टान से टकरायेगा नहीं। अन्धकार की गहनता ही तो प्रकाश की कामना को जन्म देगी। भीषण दुर्गन्धपूर्ण वातावरण से छूटने पर ही तो सुवासित उद्यान की ओर कदम उठेंगे। ठीक इसी प्रकार जीवन में जब कुछ कटु अनुभव होंगे, कुछ हानि होगी, हम अपना कुछ खोयेंगे, कहीं पराजित होंगे, तभी उनसे बचने का उपाय करेंगे। कटु अनुभव ही हमें निष्पक्ष दृष्टिकोण प्रदान करता है और उसके द्वारा हम व्यक्ति को, समाज को और विश्व को समझने की चेष्टा करते हैं।

मुश्किलें दिल के इरादे आजमाती है,
स्वप्न के परदे निगाहों से हटाती हैं,
हौसला मत हार गिरकर ओ मुसाफिर,
ठोकरें इन्सान को चलना सिखाती है।

भगवान को याद करें :

परमात्मा ने हमें सब कुछ दिया है। उन्होंने बड़े में बड़ी जानकारी प्रदान की है। हम सब को जानने वाले हैं और सारे शरीर से बिलकुल भिन्न हैं। वही जानकारी (ज्ञान) भगवान स्वरूप है, जो सदैव सब कुछ समझ सकते हैं और जानते हैं कि हम यह खराब काम करते हैं अथवा अच्छा। हमें भीतर से आवाज मिलती है कि यह काम करने योग्य है। भगवान ने हमारे लिए सब कुछ बना दिया है। भोजन, वस्त्र, हवा, पानी, फल, अन्न आदि सब कुछ उन्होंने दिया हैं। भगवान को भूल न जाना चाहिए। सर्वदा उनका गुण गान करें, भगवान को याद करें। (स्वामी लीलाशाह वाणी से)

तू है कौन ? तत्वमसि : वही तू है।

आरुणि ऋषिका बेटा श्वेतकेतु गुरुकुलसे पढ़कर लौटा तो पिताको लगा कि बेटेमें कुछ घमण्ड आ गया है। उन्होंने कहा : 'बेटा, तू समझता है कि सब जान गया, पर यह तो बता कि तूने वह विद्या पढ़ी है, जिसे पढ़कर सब कुछ पढ़ लिया जाता है ?'

'सो तो मैं नहीं जानता पिताजी ! आप मुझे बताइये न।'

आरुणि बोले : 'बेटा' तूने मिट्टी देखी है न ? मिट्टीके लौंदेसे तरह-तरहके बर्तन बनते हैं—घड़ा, मटका, सुराही आदि। मिट्टीके खिलौने भी बनते हैं। किसी खिलौने को हम हाथी कहते हैं, किसीको घोड़ा। किसीको तोता, किसीको कबूतर। किसीको राजा, किसीको रानी। किसीको कुत्ता, किसीको बिल्ली। सबके नाम अलग, सबके चेहरे अलग। पर रहते हैं सबके सब मिट्टी ही। पानीमें डालते ही सब गलकर मिट्टी हो जायँगे।

यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं
स्यद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्यव सत्यम्।[1]

इन बर्तनोंका, इन खिलौनोंका नाम चाहे जो रहे, रूप चाहे जो रहे, पर इनके भीतर सत्य एक ही है—वह है, मिट्टी।

यही हाल सोना, चाँदी, लोहा, पीतल आदि धातुओंकी बनी चीजोंका है। लोटा हो या गिलास, कलसा हो या थाली, बाजूबन्द हो या नेकलेस—सबके भीतर तत्त्व तो एक ही है। जिस धातुकी जो चीज बनी है, वही धातु उसमें सत्य है।

बेटा, यह सारा संसार एक ही तत्त्वसे, एक ही सत् से बना है। उसे तू समझ ले।

सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्प्रतिष्ठाः।[2]

यह सारी प्रजा सत्पर ही ठहरी हुई है, सत् ही इसका सहारा है और सत् ही इसकी प्रतिष्ठा है। सत्के कारण ही इसकी सत्ता है।

आरुणिने तरह-तरहसे श्वेतकेतुको समझाया। कहा, 'बेटा! इस पेड़पर तू कहींसे भी चोट कर, चाहे ऊपर, चाहे नीचे चाहे बीचमें-- सब जगहसे एक-सा ही रस निकलेगा। वह नीचेसे ऊपरतक रससे, आत्मासे भरा है। पर जब इसमेंसे आत्मा निकल जायगी, तो यह सूख जायगा। उसी तरह आत्माके निकल जानेपर शरीर मर जाता है यह आत्मा ही सत् है और वही तू है--'तत्त्वमसि'।'

'पर यह सब जगह कैसे व्याप्त है, पिताजी?'

आरुणिने कहा: 'अच्छा बेटा, एक कटोरेमें जल ले आ और नमककी एक डली। उस डलीको पानीमें डालकर रख दे।'

सुबह आरुणिने श्वेतकेतुसे कहा: 'बेटा, कल रात तूने नमककी जो डली पानीमें डाली थी, जरा उसे तो निकाल।'

पर अब वह डली कहाँ मिलनेवाली थी? श्वेतकेतुने हाथ डालकर उसे खोजा वह नहीं मिली। वह तो पानीमें घुल चुकी थी।

'वह तो नहीं मिल रही है, पिताजी।'--वह बोला।

'अच्छा तू इस पानीको ऊपरसे, बीचसे और नीचेसे आचमन कर और बता कि कैसा लगता है।'

'यह तो नमकीन है पिताजी!'

'नमकीन डली तुझे आँखोंसे तो नहीं दीखती, बेटा?'

'नही, पिताजी।'

'पर पानीमें वह ऊपर भी है, बीचमें भी है, नीचे भी है?'

'हाँ, पिताजी!'

'जिस तरह नमकीन डली तुझे दीखती नहीं, फिर भी वह इस पानीमें सब जगह व्याप्त है, ऊपरसे नीचेतक, इधरसे उधरतक भरी पड़ी है, उसी तरह वह सत् भी सब जगह व्याप्त है, पर वह तुझे दीखता नहीं। वही सत् है, वही आत्मा है और वही तू है--'तत्त्वमसि'।'

(१,२ छान्दोग्य उपनिषद् ६/१/४, ६/८/७)

प्रेषक—सी.पी. साधवानी

कंकड़ भी साथ चलेंगे ?

बगदाद का शासक काफी अत्याचारी था, उसने प्रजा को कष्ट देकर काफी धन इकट्ठा कर लिया।

एक बार गुरुनानक देव घूमाते-घूमाते बगदाद जा पहुँचे। प्रजा से शासन की सारी बात सुनी उन्हें सभी कुछ मालूम हो गया।

एक दिन वे शाही महल के आगे कंकड़ इकट्ठा करके बड़े आराम से जा बैठे।

नौकर ने जब शासक को गुरुनानक देव के आगमन की सूचना दी तो वह फौरन सिर के बल दौड़ा चला आया।

गुरुजी के सामने कंकड का ढेर देखकर उसने उत्सुकतावश पूछा गुरुदेव यह कंकड़ पत्थर किसलिए इकट्ठे किए हैं।

"भाई कयामत तो आनी ही है, यह तो तुम भी जानते हो अतः ईश्वर को भेंट देने के लिए ही यह कंकड़-पत्थर इकट्ठे किए हैं—" गुरुजी ने मुस्कराकर कहा।'अरे मैं तो तुम्हें ज्ञानी समझता था, पर तुम्हें तो यह हता नहीं कि कयामत के दिन अपने साथ कंकड़-पत्थर तो क्या सूई तक नही ले जा सकते" शासक ने गुस्से में कहा।

अब गुरुदेव की बारी थी, उन्होंने चुटकी लेते हुए कहा आप प्रजा को लूट-लूट कर काला धन इकट्ठा कर रहे हैं, उसे अपने साथ ले जाओगे ? तो यह कंकड़ भी चले जायेंगे।"

बागदाद के शासक का शर्म के मारे सिर झुक गया।

—भारती साधवानी

आत्मखोज क्यों पढ़े

यह हो नहीं सकता कि भोजन करे मोहन, और पेट भर जाए सोहन का। न ही यह संभव है कि कान्ता देवी पानी पिए, और प्यास बुझ जाए राधा देवी की। यह कैसे हो सकता है कि भोजन कराया जाए शरीर को, और आनन्द प्राप्त हो जाए आत्मा को।

शरीर और आत्मा दो अलग-अलग हैं। शरीर घर है, आत्मा उस घर में निवास कर्त्ता। शरीर देह है और आत्मा देही है। शरीर को सजाने और खिला-पिलाकर स्वस्थ, सुन्दर रखने से आत्मा को कर्म-साधना में सुविधा होती है। किन्तु सच्चे आनन्द की प्राप्ति तो आत्म साधना द्वारा ही होगी।

सुन्दर वस्त्र, मीठे पकवान, स्वादिष्ट भोजन व आलीशान बंगला, कार आदि बाहरी क्षणिक आनन्द है। इसका उपयोग करो पर उनमें लिप्त न हो। बाजार से निकलो, पर उसके साक्षी बनो उसमें लिप्त न हो। इससे भी अधिक सुखदायी वस्तुएं है उनका आनन्द उठाना सीखिये।

आत्म चिन्तन, आत्म निरीक्षण, आत्मखोज स्वाध्याय, सत्संग, कर्त्तव्य, बहन का ध्यान, परोपकार, आदि के स्वाद को भी चखने का जिसने प्रयास किया है, उसे ही सच्चा आनन्द मिल सकता है।

सच्चा आनन्द चाहते हैं तो अपने आत्मा के शुभ्र प्रकाश में अच्छे कर्मों द्वारा आत्म उत्थान की ओर बढ़ो। आत्मा के आनन्द के आगे सभी आनन्द फीके है।

यह सच्चा आनन्द सत्-साहित्य के पढ़ने और उसके अनुसार यथाशक्ति अनुसरण करने से प्राप्त हो सकता है।

यह छोटी सी पत्रिका **'आत्मखोज'** आपके हाथों मे है, इसमें आपके शरीर और आत्मा दोनों के लिए चुनकर अच्छी खुराक देना का प्रयत्न किया जाता है अब और अधिक यह बताना कि 'आत्मखोज' क्यों पढ़े निरर्थक है। समझदार इसका खुद उपयोग करते है और परोपकार की भावना से इसका प्रचार प्रसार बिना किसी स्वार्थ के करते हैं। आप इसे अपनी पत्रिका समझ अपनाये और सहयोग व सुझाव देकर इसके विकास में योग दे।

—**सी. पी. साधवाणी** अवैतनिक-संपादक

'आत्मखोज', शान्ति निकेतन स्कूल लालकोठी जयपुर ३०२०१५

आवश्यक सूचना [भूल सुधार]

मई अंक के अन्तिम पृष्ठ पर **आवश्यक सूचना** के अन्तर्गत अहल्वश्री सिंधी समाज द्वारा 28 जून 1985 को सामूहिक विवाह महायज्ञ का आयोजन किया जा रहा है, जब कि भूल से 24 जून 85 छप गया था, अतः हमे खेद है। अन्य सब कार्यक्रम यथावत है। आयोजन 28 जून 985 को स्वामी लीलाशाह सेवा समिति (रजि०) जयपुर द्वारा किया जा रहा है।

अब तक 60 जोड़ों की स्वीकृति समिति को मिल चुकी है। फार्म भर कर भेजने की अन्तिम तिथि 5 जून 85 तक है। इस अवसर पर एक स्मारिका का भी प्रकाशन किया जा रहा है।

❀ धन्यवाद ❀

- मथुरा से **श्री गोपालदास** ने सदस्यों को नियमित वनाये रखने में कठोर परिश्रम किया है। हम उन्हें 'आत्मखोज' की ओर से आभार व्यक्त करते हैं।
- चेम्बूर, बम्बई से श्री **बालचन्द भगवानदास** ने आजीवन सदस्य बनकर 'आत्मखोज को सहयोग दिया है।

जून की विशेष तिथियां

3 (सोमबार) पूर्णमासी (सत्यनारायण), 14 (शुक्रवार) एकादशी
18 (मंगलवार) अमावश्या — 19 (बुद्धवार) आषाढ़ शु. 1 (चंड)
20 (गुरुवार) ईद रमजान — 23 (रविवार) स्वामी टेऊंरामजयंती
28 (शुक्रवार) एकादशी

० निवेदन ०

आपका वार्षिक चन्दा 8/– आठ रुपये भेजकर सहयोग देने की कृपा करें। मनीआर्डर या ड्राफ्ट आत्मखोज, शान्ति निकेतन स्कूल, लालकोठी, जयपुर–302015 के पते पर भेजें।

राम नाम की महिमा



संत लीलाशाह

॥ जय रामजी को ॥

सो पंडितु जो मनु परबोधै ।
राम नामु आतम महि खोजै ॥
राम नाम सारु रसु पीवै ।
उसु पंडितु कै उपदेसि जगु जीवै ॥

(सुखमनी साहब ९/४)

भावार्थ—पण्डित वही है जिसके मन में ज्ञान का प्रकाश हो रहा हो, जो अपने अन्दर ही ईश्वर को खोजता हो, जो राम नाम के अमृत रस को पीता हो। ऐसे पण्डित के ही उपदेशों से यह संसार जीवन पाता है। अतः सुबह शाम सच्ची श्रद्धा और प्रेम से राम नाम का जाप करने वाला संसार के सभी सुख प्राप्त कर, परलोक में भी परम आनन्द का हकदार होता है। प्रेम से बोलो—**जय रामजी की ! जय रामजी की !!**

सदस्यता क्रमांक ....

श्रीमान्/श्रीमती/कु० ....

....

....

प्रेषक : पिन-कोड

आत्मखोज शान्ति निकेतन स्कूल
लालकोठी, जयपुर-३०२०१५